परमार्थ पथ और संतमत साधना

किसी काम में, चाहे वह दुनियाँ के मुत्तलिक हो चाहे परलोक के, तरकीब दरकार है और तरकीब का होना बिला किसी सिद्धांत और उसूल के मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकिन है.

जब आदमी में कोई ख़ास कमज़ोरी होती है या बहुत सी कमज़ोरियाँ होती हैं, तो कमज़ोरी के नुक्स को दूर करने के लिए तदबीरें करता है. तदबीरों की सूरतें ख़ासकर के कर्म, उपासना जैसी कई सूरतें हो गयीं और होती जाती हैं. इन्हीं के मेल-जोल और विभाजन से हज़ारों मत-मतान्तर, पंथ और संप्रदाय क़ायम हो चुके हैं और न मालूम कितने पैदा होंगे.

अब गौर करके सब सूरतों की तहक़ीक़ात (जाँच) की जाये तो सिर्फ नाम और रूप तो अलग-अलग दिखाई पड़ेंगे, लेकिन हर सूरत में सिद्धांत और उसूल अपनी ज़ाती (मूल) और असली सूरत में छुपा हुआ मौज़ूद मिलेगा और किसी फ़रीक़ (संप्रदाय) को - जहां तक मेरा ख्याल है - अगर हठधर्म को दूर कर लें तो वह इंकार नहीं कर सकेंगे कि मूल सिद्धांतों में कोई ख़ास भेद नहीं है हाँ, मतभेद का होना लाज़मी है क्योकि हर शख्स और जमात की फ़ितरत (प्रकृति) और आदतें अलग-अलग होती हैं.

समझने और समझाने के लिए अगर हम लोग अपने ही मत के सिद्धांतों को आगे रखकर ग़ौर और विचार करके नतीज़ों को देखें तो सिद्ध हो जायेगा कि यही बुनियादी उसूल सब मज़हबों में घुसे हुए हैं और कोई फ़िरक़ा (संप्रदाय) इनसे बचकर नहीं रह सकता.

हिन्दुओं के वेदान्त का फ़िल्सफा (दर्शन) - वेदान्त को सबसे ऊंचा साबित किया गया है . सब क़िस्म के फ़िल्सफा वाले बहस कर-कराकर, खूब दलीलों को करके, आख़िरकार इस जगह चुप होकर बैठ जाते हैं जहाँ 'वेद का अंत' हो जाता है. यानी मुरक्क़िब (कंपाउंड) और मिलौनी चीज़ों से बहुत दूर पहुँचते हैं. और जहां इस मामूली कारोबारी अक़्ल को दख़ल नहीं रहता, इस हालत को महबियत की क़ैफ़ियत या फ़ना की हालत (लय की अवस्था) बोलते हैं.

ब्रह्म-विद्या के जानने वाले इन्हीं कैफ़ियतों (दशाओं) और हालतों को द्वैत, अद्वैत , विशिष्टाद्वैत - द्वैताद्वैत, वग़ैरह के नामों से पुकारते हैं, और इस्लाम धर्म के सूफी संत इन्हीं कैफ़ियतों को तौहीद -वजूदी , शहूदी, ऐहदियत, वाहिदियत में तक़सीम (विभाजित) करते हैं. ग़रज़े कि इन ऊंची हालतों पर पहुँचने के लिए जो कोशिश की जाती है वह साधनों के ज़रिये से होती है. उन साधनों की इब्तदाई तक़सीम (प्रारम्भिक विभाजन) सिर्फ चार है, जिनको साधन चतुष्टय कहते हैं. बिना इन चार साधनों के कोई अभ्यासी आख़िरी मंज़िल पर नहीं पहुँच सकता.

पहला साधन - पहला साधन ' **तमीज़** ' (या विवेक) है, जिसमें हस्त और नेस्त की तमीज़ हो जाती है. इसका मतलब यह है कि इस बात का ज्ञान हो जाता है कि इस दुनियाँ में कौन-कौन सी चीज़ें फ़ानी या मिट जाने वाली हैं और तबदील होने वाली हैं और कौन सी चीज़ ऐसी है जो हमेशा क़ायम रहती है, बल्कि कभी नाश और तबदील नहीं होती. इस साधन के आते ही उसके बाद ही दूसरा साधन आ जाता है.

दूसरा साधन : इस दूसरे साधन को **'वैराग' (नफ़रत-अज-दुनियाँ**) कहते हैं. जब यह तमीज़ (ज्ञान) हो गयी कि फलां-फलां चीज़ तबदील होने वाली है तो उससे ख्वामखाह क़ुदरतन (स्वाभाविक रूप से) नफ़रत पैदा होने लगेगी. तबियत का लगाव उस चीज़ से हटता जायेगा और नित्य या हमेशा रहने वाली चीज़ की तरफ़ तवज्जो ज़्यादा होती जावेगी.

तजुरबे (अनुभव) का लाभ : दुनिया से नफ़रत या लगाव का कम हो जाना, इन तरीक़ों से ही होता है. या तो दौलत के पदार्थ ख़ूब भोग लेने से जब हसरतों का पंजा ख़ूब जकड लेता है, उस वक्त तबियत का रुझान कम हो जाता है, या दोस्तों-रिश्तेदारों की अदावत (विमुखता) के साबित होने पर या फिर अपने लोगों की मौतों के हो जाने पर और अपनी मौत का नज़ारा पेश आ जाने पर दुनियाँ से तबियत हट जाती है.

लेकिन यह तबियत का हटाव पक्का और मुस्तक़िल (स्थायी) नफ़रत नहीं है, क्योकि जब तक ये चीज़ें भोग न ली जावें, उस वक्त तक वासनाओं और ख्वाहिशों का बीज अन्दर दबा हुआ पड़ा रहता है और किसी वक्त और सामान मिल जाने पर फिर उभर खड़े होने का अंदेशा रहता है. बिना मन मरे हुए और उनका साधन -सामान साफ़ हुए सच्चा वैराग पैदा नहीं होता. सिर्फ़ तजुरबा ही ऐसा उम्दा ज़रिया है जो असली वैराग पैदा करता है.

अब तजुरबा और साधन की दो सूरतें जो ऊपर बयान की गयी हैं वह सही तो हैं, मगर उनका तरीक़ा और इस्तेमाल किसी पंथ ने किसी तरह किया और कराया है और किसी ने दूसरी तरह पर.

वेदांत के मानने वालों ने दूसरे साधन को यानी वैराग पैदा होने के लिए यह तरक़ीब अख़्तियार की कि पहले सिर्फ़ यह ख़्याल करना शुरू किया जाए कि माया मिथ्या और नाशवान है और असली चीज़ ब्रह्म है . इस तरह ख़्याल से यह साधन शुरू किया, और इस ख़्याल को इस क़दर पुख़्ता किया और कराया कि किसी तरह यह बात दिमाग़ और हाफिज़े (स्मरण -शक्ति) से हट ही न सके.

लेकिन यह सिर्फ़ ख़यालो पहलू से किया गया. असली पहलू को कोई दख़ल नहीं दिया, हालांकि असली पहलू एक तरह पर तो ज़रूर आ गया की क़ुब्बते -ख़्याल के पुख़्ता (इच्छा-शक्ति) को दृढ करने का साधन किया, जो वाक़ई तौर पर सही है.

मगर संत मत वालों ने क़ुब्बते तमीज़ी या विवेक शक्ति (जो सिर्फ़ ख़्याल से ही पैदा की जाती है) वह असली तजुरबे के न होने की वज़ह से पुख़्ता नहीं होती, यही सही माना. अगर ख़ूब गौर करके देखा जाए तो विवेक और वैराग कोई साधन नहीं है बल्कि किसी ख़ास साधन या साधनों के नतीज़े हैं. जब तक इन्द्रियों, मन, बुद्धि, और चित्त को साफ़ न किया जावेगा और मांझा न जावेगा उस वक्त तक सबसे ऊपर वाले तत्व यानी अहंकार की शक्ति किस तरह से तेज़ और साफ़ हो सकेंगी? विवेक शक्ति ख़ालिस अहंकार तत्व के मातहत है. इसलिए पहले साधन विवेक को साफ़ करना, फिर विवेक के नतीज़े दूसरे साधन वैराग को लेकर संत मत में शुरुआत कराई गयी .

वेदान्त का **तीसरा साधन** : **षट-सम्पत्ति** : वेदान्त का तीसरा साधन और संतमत के पहले साधन के छह : भाग हंद जिनको 'षट संपत्ति या छह : तहसीलात ' (शम, दम, वग़ैरा) कहते हैं. मतलब यह है कि इनके अमल से छह : क़िस्म के फ़ायदे होते हैं.

(१) **शम** : - पहली संपत्ति या हासिल का नाम 'शम ' यानी तस्क़ीने क़ल्ब है जिसके मायने हैं कि दिल का ठहराव हो जावे, दिल इधर-उधर न बहके , अपने केंद्र पर रहे. दिल का ठहराव दो तरह पर होता है - वैराग और अभ्यास से . साधू लोग अभ्यास को पहले लेते हैं, जिससे कि वैराग ख़ुद-ब्-ख़ुद पैदा हो जाता है.. लेकिन वेदान्ती लोग वैराग के ख़्याल को मज़बूत करने को ही अभ्यास मानते हैं. वैराग, नेति-नेति मार्ग (मनफ़ी) का तरीक़ा ज्ञानियों का है, जो किसी क़दर मुश्किल है. अभ्यास योग और उपासना सरल है क्योंकि वह ऐती मार्ग है. नेति मार्ग में हर चीज़ को छोड़ने का अमल किया जाता है और ऐति मार्ग में क़बूल और अख़्तियार किया जाता है, यानी किसी एक ही चीज़ में दिल को लगा लेते हैं. जब इस अमल में दिल एक तरफ लग जाता है तो निहायत आसानी से बाक़ी और चीज़ों से क़ुदरती तौर पर दिल हट जाता है और उनकी तरफ़ मुख़ातिब (आकर्षित) नहीं होता . 'शम ' के अलावा पाँच और सम्पत्तियाँ इस तरह हैं -

(२) **दम** - वाह्येन्द्रिय वृत्तियों का निरोध करके हरेक इन्द्रिय को उसके व्यापार से आज़ाद करना 'दम' यानी दमन कहलाता है.

(३) **उपरति** - इन्द्रियों का दमन हो जाने पर विषयों की ओर उनकी पुनरावृत्ति न होने देने को

' उपरति ' कहते हैं. एक बार निरोध करने पर भी बार-बार विषयों की ओर दौड़ना इन्द्रियों का स्वाभाविक धर्म है. इसलिए सदा उनकी लगाम खींचते रहना चाहिए. इसी को उपरति कहते हैं .

(४) **तितिक्षा** - हर अच्छी-बुरी बात को बर्दाश्त करना यानी हमेशा द्वन्द सहन करने की शक्ति को तितिक्षा कहते हैं. हानि-लाभ, शीत-गर्मी, सुख-दुःख, राग-द्वेष वगैरा द्वन्द कहलाते हैं. स्नान-सन्ध्यादि कर्म करते समय गर्म -सर्द की जो बाधा होती है उसकी कोई परवाह नहीं, हमारा कर्म पूरा होना चाहिए, और प्रारब्ध के लिहाज़ से पैदा होने वाले सुख-

दुःख हमें भोगने ही चाहिए, उनसे कोई बच नहीं सकता. इस तरह की सर्दी-गर्मी, सुख-दुःखादि के सहन करने की शक्ति को तितिक्षा कहते हैं .

(५) **समाधान -** पाँचवा साधन 'समाधान ' है. सम्पूर्ण विषयों में सदा शांत रहकर संत मुनियों की वाणी सुनकर, वाक्य -श्रवण में बुद्धि रखना समाधान है.

(६) **श्रद्धा -** छठी सम्पति ' श्रद्धा ' है. उसकी व्याख्या यह है कि सतगुरु के उपदेश ओर उनकी बानियों में लिखे तजुर्बात पर पूरा विश्वास रखना, उसमें कमी न होना श्रद्धा कहलाती है .

शेष पांच सम्पत्तियों का विस्तृत विवरण :

दम- (इन्द्रिय दमन) और ज़ब्ते- हवास की तफ़सील (व्याख्या) किताबों में बहुत तफ़सील (विस्तार) के साथ दर्ज़ है, उसे देखना चाहिए. हमारे यहां सत्संग में अगर जिज्ञासु या मुरीद गुरुमुख हो तो बिला अभ्यास के शुरू की क़ुब्बते - कश्फी (खैंच -शक्ति) से ही विवेक, वैराग, ज़ब्ते - हवास (इन्द्रिय दमन) और दिल की सफाई हो जाती है. मोददीब-मुरीद (शिष्ट शिष्य) गुरु-मत होता है और बेअदब मुरीद मन-मत. असली बेअदब वह है जो दूसरी ख़्वाहिशात दुनियांवी (सांसारिक इच्छाओं) को साथ लाता है और अगर मुरादें (इच्छाएं) उसकी पूरी न हों, तो चलता फिरता नज़र आता है. उसके इरादे निरे खुदगर्ज़ी (स्वार्थ) के होते हैं .

फिदायी -मुरीद (जो गुरु से प्रेम करता हो) फ़ज़्ली (जिस पर ईश्वर की कृपा होती है) होता है . वह कुछ करता धरता नहीं. फ़ज़्ल (ईश्वर की कृपा) से उसके सब काम सिद्ध हो जाते हैं चाहे वह इस लोक के हों या चाहे परलोक के. फ़िदायी मुरीद उसको कहते हैं कि जो कुछ उसका है या उसमें है वह सब कुछ गुरु के अर्पण करके ता मन, धन भी फ़िदा कर डालता है. फ़िदा करना न्यौछावर करने को कहते हैं. और फ़ज़्ली मुरीद उसको कहते हैं कि उसको अभ्यास से कुछ गरज़ नहीं , ऊपर से खुद-ब- खुद अमृत की धार की वारिश उसके क़ल्ब (हृदय चक्र) पर होती रहती है. इसको ' मुराद ' भी कहते है. लेकिन ऐसे हज़ारों में एक या दो मुश्किल से होते हैं.

अब ' शम ' दम ' दोनों से फुर्सत मिल गयी. अब तीसरी संपत्ति की बारी आती है. उसको **उपरति, उपराम या सेरी** कहते हैं. इसके लफ़्ज़ी मायने ख़ात्मे के हैं. इल्लाह (आरम्भ) में उपरति मन की उस हालत को कहते हैं जिसमें लोक और परलोक की कोई तमन्ना नहीं रहती और उसको पूरा यकीन हो जाता है कि ये सब हेच (नाशवान) है. उपरति और वैरागमें फर्क यह है कि वैराग में चीज़ों को दोष दृष्टि से देखा जाता है और यह बुरी चीज़ है, इसलिए इससे परहेज़ लाज़िम है. और इसी वजह से संतमत में विवेक से पैदा हुए वैराग की हालत को ग़ैर-मुकम्मिल (अपूर्ण) हालत मालूम करके उसकी तरफ तवज्जो नहीं करते और अपना काम करते चले जाते हैं, जब तक कि मन, इन्द्रियां और बुद्धि साफ़ न हो जाएँ.

उपरति में इन चीज़ों को भोग कर और उनसे सेर (तृप्त) होकर छोड़ देते हैं कि ये हमारे दिल लगाने के लायक नहीं हैं. उपरति में दुनियाँ के भोगों और व्यवहारों से नफ़रत पैदा हो जाती है और फिर बहिश्त-दोज़ख (स्वर्ग-नर्क) के लोकों में जाने से बेपरवाह हो जाती है.

चौथी **सम्पत्ति तितिक्षा या तहम्मुल** है. यह बर्दाश्त का माद्दा है, जिसमें हर तरह के मान-अपमान की कुछ परवाह नहीं होती. किसी की तारीफ़ या नुक़्ताचीनी (आलोचना) का असर नहीं होता और हर हाल में हनुमान जी महाराज की तरह दीनता-अधीनता का गुण पैदा हो जाता है.

पाँचवी संपत्ति **श्रद्धा** यानी गुरु में और दूसरे शास्त्रों में विश्वास होना है. उससे पहले विश्वास और ऐतक़ाद-असली (पूर्ण श्रद्धा) मुरीदों (शिष्यों) में हरगिज़ पैदा नहीं हो सकता. नक़ली ऐतक़ाद होता है, जिसका तज़ुर्बा सालहासाल (वर्षों) से किया जा चूका है. ख़ामख़्वाह बिना गरज़ और मतलब के ऐसी मौहब्बत गुरु में हो जाना कि जिसकी वजह सोचने से भी समझ में न आवे. उस मंज़िल तक पहुँचने में न मालूम कितनी दफ़ा अभ्यासी गुरु से बद-ऐतक़ाद (अविश्वासी) होता रहता है, और कभी बा-ऐतक़ाद हो जाता है. यह कैफ़ियत किसी ऐतबार (भरोसे) के क़ाबिल नहीं है. ख़ामोशी से गुरु उस वक्त का इंतज़ार करते रहते हैं और मुरीदों के जोश और ज़ज़्बात के जो इज़हार होते हैं, उनको मुनासिब वक्त के आ जाने तक हूँ हाँ करते रहते हैं. इसी मंज़िल पर पहुँच कर शास्त्रों पर भी असली श्रद्धा पैदा होती है, उनका असली मतलब समझ में आने लगता है.

छठी संपत्ति **समाधान या यकसूई** है. यह आखिरी किस्म की यकसूई है, इसमें आनंद और

गैर -आनंद की तरफ कुछ तवज्जो और दिलचस्पी बाक़ी नहीं रहती. तव्वकुल, राज़ी-व्-रज़ा, मुक़ामे -हैरत बाक़ी बा-अल्लाह होना उसके चिन्ह और अलामतें हैं .

चौथा साधन

अब चौथा साधन आता है जिसमें **मोक्ष या तलबे -निजात** (मुक्ति की इच्छा) का सबाल आता है , जो भक्ति की नज़र से, अमली पहलू की नज़र से, और ज्ञान के नज़र से पैदा हो जाता है .

वादए वस्ल चूं शबद नज़दीक ! आतिशे शौक़ तेज़ तर गरदद !

(अर्थात - मिलाप की घडी जितनी नज़दीक होती जाती है उतनी ही दर्शन की आग (विहव्लता की ज्वाला) तेज़ होती जाती है .)

अब सिवाय क़ुर्बत (समीपता) और दीदारे-हक़ (ईश्वर दर्शन) के कोई ख्वाहिश बाक़ी नहीं रहती. जब तक यह हालतें अपने ऊपर न गुज़रें, उनका समझ लेना नामुमकिन है .

इतने बयान से मुमकिन है कि हमारी मतलब-बरारी , तस्क़ीने दिल (दिल की तस्सली) के लिए हो जाये,और वहम या शक़ जो घेरे रहते हैं किसी हद तक उनका निवारण हो जाये . मेरी असली गरज़ इस बयान से यह थी कि अभ्यासी लोग यह समझ लें कि मन के ज़ज़बात (भावनाएं) और कैफ़ियात (वृत्तियों) के समझ लेने के वास्ते विवेक पैदा हो गया. लेकिन अपनी कमज़ोरी और नुक़्स दिखाई नहीं देते हैं और उसके मालूम करने में अभी मुकम्मिल (पूर्ण) नहीं है.

इन ६ किस्म की सम्पत्तियों से जो नतीज़े निकलते हैं और चौसाधनों से नतीज़े हासिल होते हैं, अगर वह मालूम न हों, तो अभी रास्ता दूर है. ख्व्वाबों, कैफ़ियतों, ज़ज़्बों (स्वप्नों, वृत्तियों, व भावनाओं) और आनंद की अवस्थाओं से दिल को तसल्ली दे देना ऐसा है जैसे कि बच्चों की तसल्ली खिलौनों से हो जाती है.

असली मक़सद (आशय) उसकी कुर्बत (नज़दीकी) और शास्त्रों और बुज़ुर्गों का इत्तबा क़ामिल (पूर्णतया उनके रास्ते पर चलना) का नसीब हो जाना है, और बस .

अब मैं और सब लोग उसके दरबार में प्रार्थना करें कि इस तरह काम बनाने की तौफ़ीक़ (शक्ति + युक्ति) और हिम्मत हमको अता फ़रमावें (प्रदान करें) .

राम सन्देश : सितम्बर-अक्टूबर , २००४